जनसत्ता

3 जून, 2019

रिश्ता और कारोबार

भारत और अमेरिका के बीच पिछले पांच सालों में रिश्ते काफी प्रगाढ़ हुए हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने कई मौकों पर इस प्रगाढ़ता का इजहार भी किया है। इसकी एक वजह यह भी है कि भारत की अर्थव्यवस्था लगातार मजबूत हुई है। भारत एक बड़ा बाजार है। मगर पिछले कुछ महीनों में ट्रंप सरकार ने जो कदम उठाए हैं, उसका भारत पर नकारात्मक असर पड़ने की आशंका जाहिर की जा रही है। पहले अमेरिका ने ईरान से कच्चे तेल की खरीद पर प्रतिबंध लगाया। यह फैसला ऐसे वक्त में किया गया, जब अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की कीमत काफी बढ़ चुकी है। भारत के लिए तेल की कीमतें नीचे लाना बड़ा चुनौती है। ईरान से तेल की खरीद बंद होने से यह चुनौती और बढ़ गई है। अब अमेरिका ने व्यापार में सामान्य तरजीही व्यवस्था यानी जीएसपी खत्म कर दी है। जीएसपी के तहत अमेरिका में विकासशील देशों की करीब दो हजार वस्तुएं शुल्क मुक्त भेजी और बेची जा रही थीं। अब कोई भी देश ऐसा नहीं कर पाएगा। स्वाभाविक ही इससे भारत के व्यापार पर नकारात्मक असर पड़ने की आशंका जताई जा रही है। हालांकि भारतीय वाणिज्य मंत्रालय ने कहा है कि दो देशों के रिश्तों में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, अमेरिकी फैसले में भी बेहतरी के रास्ते खुल सकते हैं।

अमेरिका इस वक्त आर्थिक मंदी के दौर से गुजर रहा है। डोनाल्ड ट्रंप अर्थव्यवस्था सुधारने और अमेरिकी युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने के वादे के साथ सत्ता में आए थे। इन पक्षों पर वे लगातार काम कर रहे हैं। इसी क्रम में उन्होंने जीएसपी खत्म करने का फैसला किया है। उन्हें लगता है कि इससे अमेरिकी वस्तुओं को घरेलू बाजार मिलेगा और जो पैसा विदेशी कंपनियां कमा रही हैं, वह अमेरिकी कंपनियों के पास रहेगा। फिर जीएसपी खत्म होने के बाद विदेशी वस्तुओं पर जो शुल्क लगेगा, उससे भी राजस्व की कमाई बढ़ेगी। अमेरिका का यह फैसला कोई हैरान करने वाला नहीं है। अर्थव्यवस्था की मंदी के दौर में सरकारें ऐसे फैसले करती हैं। मगर अमेरिका ने जिस वक्त और जिस ढंग से यह फैसला किया है, वह स्वाभाविक ही सबकी नजरों में खटक रहा है। अमेरिका की व्यापारिक और वाणिज्यिक नीतियां विश्व बाजार में अपना वर्चस्व बढ़ाने के इरादे से बदलती रही हैं। वह अक्सर अपने हितों को ऊपर रख कर ये नीतियां बनाता और समाप्त करता रहा है। इस क्रम में वह अनेक देशों को मोहरे के रूप में भी इस्तेमाल करता रहा है। इसलिए जीएसपी संबंधी उसके फैसले के पीछे के उसके इरादे को ठीक नहीं माना जा रहा।

अमेरिका के सामने चीन की अर्थव्यवस्था हमेशा प्रतिस्पर्धा खड़ी करती रही है। उससे पार पाने के वह अलग-अलग देशों के साथ व्यापारिक रिश्तों में प्रयोग करता आया है। जीएसपी संबंधी फैसला भी उसने इसी मंशा से किया है। इस फैसले का असर हालांकि कई देशों पर पड़ेगा, पर भारत में इसे लेकर इसलिए चिंता जताई जा रही है कि इस वक्त भारत खुद अर्थव्यवस्था मजबूत करने की चुनौतियों से गुजर रहा है। उसमें एक चुनौती निर्यात दर बढ़ाना भी है। इसलिए जीएसपी खत्म होने से अमेरिकी बाजार में भारतीय उत्पाद कड़ी प्रतिस्पर्धा में आएंगे। चिंता की बात इसलिए नहीं होनी चाहिए कि भारत सरकार इस बात को लेकर आश्वस्त है कि अमेरिका के साथ रिश्ते प्रगाढ़ होने की वजह से वह इस बाधा से पार पाने के रास्ते निकाल लेगी।

गरमी का सवाल

उत्तर भारत के ज्यादातर राज्य इन दिनों लू की चपेट में हैं। जैसी गरमी पड़ रही है और गरम हवा की लपटें झुलसा रही हैं, वह कोई नई बात नहीं है। शायद ही कोई साल ऐसा गुजरता हो जब गरमी के रेकार्ड टूटने की खबरें पढ़ने-देखने को न मिलती हों। मौसम विभाग की भविष्यवाणी और मीडिया की खबरों से जब पता चलता है कि इस बार ये रेकार्ड टूटा, या ये इलाका ज्यादा झुलस रहा है, तब गरमी का अहसास और बढ़ जाता है। यों तो जम्मू-कश्मीर और हिमाचल प्रदेश जैसे पहाड़ी राज्यों से लेकर राजस्थान, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना आदि सभी राज्य प्रकृति की इस मार को झेल रहे हैं। लेकिन इस बार जिस खबर ने गरमी और बढ़ाई वह यह कि राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले में गरमी का पचहत्तर साल का रेकार्ड टूटा और पारा उनचास डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया। हालांकि राजस्थान के धौलपुर जिले में पारा पचास डिग्री पहुंचने का रेकार्ड पहले से दर्ज है। दिल्ली के लिए मौसम विभाग ने रेड अलर्ट जारी किया। देश के ज्यादातर इलाकों में तापमान चवालीस से अड़तालीस डिग्री के बीच बना हुआ है। आने वाले दिनों में इससे राहत की कोई उम्मीद नहीं है, यही बात गरमी से कहीं ज्यादा परेशान करने वाली है।

ऐसा नहीं है कि रेकार्ड तोड़ गरमी आज ही पड़ रही है। लेकिन देखने में आ रहा है कि मौसम की मार से निपटने में हम पहले के मुकाबले कहीं न कहीं कमजोर पड़ते जा रहे हैं। आधुनिक जीवनशैली, खानपान, रहन-सहन के बदलते तौर-तरीकों ने हमें मौसम की मार का सामना करने के मामले में कमजोर कर दिया है। एअर कंडीशनर का ही उदाहरण लें। घर-दफ्तर यहां तक कि सार्वजनिक परिवहन के साधन जैसे बसें, टैक्सी तक एसी से युक्त हैं। कारें तो अब बिना एसी वाली आती ही नहीं हैं। गरमी से निजात पाने के लिए कस्बों, शहरों और महानगरों में मध्यवर्गीय परिवार तक दो-दो, तीन-तीन एसी लगवा लेते हैं। जो ज्यादा संपन्न हैं वे पूरे घर के लिए छोटे एसी प्लांट तक लगवाते हैं। लेकिन यही एसी अपनी गरम हवा से वातावरण की गर्मी को और बढ़ाता है, यह कोई नहीं सोचता। देश का बड़ा हिस्सा और तबका ऐसा भी है जो बिना कूलर या एसी के गरमी का सामना करता है। गरमी की तीव्रता तो उतनी ही है जितनी पचास-सौ साल पहले थी। बस फर्क इतना ही है कि अब हम उसका सामना करने के मामले में कमजोर पड़ते जा रहे हैं।

लेकिन गरमी का दूसरा भयावह पहलू भी है जो हमें यह सोचने पर विवश करता है कि क्यों नहीं हम मौसम की मार से लोगों को बचा पाते। पिछले बाईस दिनों में गरमी के प्रकोप से आंध्र प्रदेश में पैंतालीस और तेलंगाना में सत्रह लोगों की मौत हो गई। देश के कई राज्यों में बड़ी संख्या में लोग गरमी का शिकार बनते हैं, जिनकी खबर तक नहीं बनती। गरीब तबके के पास गरमी से निपटने के पर्याप्त बुनियादी इंतजाम नहीं होते। करोड़ों परिवार ऐसे हैं जिनके पास पंखे-कूलर जैसी सुविधा भी नहीं है। पीने का साफ पानी नहीं है। लू लगने पर पर्याप्त चिकित्सा सुविधा तक नहीं मिल पाती। ऐसे में गरमी गरीब को निगल जाती है। यह स्थिति एक लाचार और लापरवाह शासन तंत्र की हकीकत को बयां करती है। गरमी के मौसम में पहाड़ी क्षेत्रों में जंगल धधक उठते हैं। पिछले कई दिनों से उत्तराखंड के जंगल जल रहे हैं। सवाल है जब ऐसी घटनाओं से हम हर साल दो-चार होते हैं तो भविष्य के लिए कोई सबक क्यों नहीं लेते!

कल्पमेधा

जो व्यक्ति निश्चय कर लेता है, उसके लिए कुछ असंभव नहीं है।

-इमर्सन

सिमटती खेती, उजड़ता किसान

पंकज चतुर्वेदी

दिल्ली से सटे जिलों- गाजियाबाद, बागपत, गौतम बुद्ध नगर जिले से बीते तीन दशकों से खेत उजड़ने का जो सिलसिला शुरू हुआ, उससे भले ही कुछ लोगों के पास पैसा आ गया हो, लेकिन वह अपने साथ कई ऐसी बुराइयां व अपराध लाया कि गांवों की संस्कृति, संस्कार और सभ्यता सभी कुछ नष्ट होते चले गए। जिनके खेत थे, उन्हें तो कार, मकान और मौज-मस्ती के लिए पैसे मिल गए, लेकिन उनके खेतों में काम करने वाले बेरोजगार हो गए।

जलवायु परिवर्तन के चलते मौसम का गड़बड़ाता मिजाज खेती के लिए बड़ा संकट बन गया है। इससे केवल देश को अन्न उपलब्ध कराने की क्षमता ही नहीं, कृषि पर लोगों की निर्भरता भी घटी है। इस कारण खेती के काम में लगे लोग रोजगार की तलाश में पलायन कर रहे हैं। कहीं विकास के नाम पर तो कहीं शहरीकरण की चपेट में खेत सिमट रहे हैं। खेती में फायदा न देख कर उससे विमुख हो रहे लोगों की संख्या साल-दर-साल तेजी से बढ़ रही है। राज्यों के हिसाब से देखें तो सबसे बुरा हाल उत्तर प्रदेश का है। यह दुखद है कि राज्य का किसान दिल्ली या ऐसे ही अन्य महानगरों में दूसरों की चाकरी करे, गांव की खुली हवा-पानी छोड़ कर महानगर की झुग्गियों में बसे और यह मानने को मजबूर हो जाए कि उसका श्रम किसी पूंजीपति के पास गिरवी रख दिया गया है।

हालांकि पूरे देश में ही खेतों के बंटवारे, खेती की बढ़ती लागत, फसल के वाजिब दाम के सुनिश्चित न होने, सिंचाई की माकूल व्यवस्था के अभाव जैसी समस्याओं के कारण खेती पिछड़ रही है। परिवारों के बंटवारे से जैसे ही जोत छोटी होती है तो खेती में मशीन व तकनीक के उपयोग की लागत बढ़ जाती है। इसी के चलते किसान खेती से बाहर निकल कर वैकल्पिक रोजगार की तलाश में खेत बेच कर बड़े शहरों की राह पकड़ता है। देश में किसानों की कुल संख्या लगभग पंद्रह करोड़ है। पांच साल पहले यह संख्या करीब चौदह करोड़ थी। लेकिन इसमें लघु और सीमांत किसानों की संख्या छियासी फीसद है। वहीं उत्तर प्रदेश में लघु और सीमांत किसान तिरानवे फीसद हैं जिन्हें खेती के बदौलत दो जून की रोटी मिलना मुश्किल हो रहा है। बुंदेलखंड जैसे इलाकों में हर तीन-चार साल में अल्प वर्षा तो खेती की दुश्मन है ही, आवारा पशु एक नई समस्या के रूप में उभरे हैं। एक तो छोटा-सा खेत, वह भी प्रकृति की कृपा पर आश्रित और उसमें भी गायों का रेवड़ घुस गया तो किसान बर्बादी अपनी ही आंखें के सामने देखता रह जाता है। यदि मवेशी को भगाएं और वह दूसरे के खेत में चले गए तो उससे फौजदारी तय है। ऐसे में बुंदेलखंड से दिल्ली आने वाली ट्रेन व बसें हर समय गारा-गुम्मा का मजूरी करने वालों से अटी रहती हैं।

सरकारी आंकड़े बताते हैं कि उत्तर प्रदेश में करीब ढाई करोड़ हेक्टेयर भूमि है जिसमें से शुद्ध बुआई वाला (यानी जहां खेती होती है) रकबा एक करोड़ अड़सठ लाख बारह हजार हेक्टेयर है जो कुल जमीन का करीब सत्तर फीसद बैठता है। जाहिर है, राज्य के निवासियों की रोजी-रोटी का सबसे बड़ा जरिया खेती ही है। राज्य में कोई ढाई फीसद जमीन उसर या खेती के अयोग्य भी है। प्रदेश के तिरपन प्रतिशत लोग किसान हैं और कोई बीस फीसद खेतिहर मजदूर। यानी लगभग तीन-चौथाई आबादी इसी जमीन से अपना अन्न जुटाती है। एक बात और गौर करने लायक है कि 1970-1990 के दो दशकों के दौरान राज्य में कुल बोया गया क्षेत्रफल एक सौ तिहत्तर लाख हेक्टेयर स्थिर रहने के बाद अब लगातार कम हो रहा है। ऐसोचेम का कहना है कि हाल के वर्षों में कृषि के मामले में उत्तर प्रदेश की सालाना विकास दर (सीएजीआर) महज 2.9 फीसद है, जो राष्ट्रीय फीसद 3.7 से बेहद कम व निराशाजनक है। विकास के नाम पर सोना उगलने वाली जमीन की दुर्दशा इस आंकड़े से आंसू बहाती दिखती है कि उत्तर प्रदेश में सालाना अड़तालीस हजार हेक्टेयर खेती की जमीन कंक्रीट द्वारा निगली जा रही है। सन 2013 की कृषि नीति में राज्य शासन ने खेती की विकास दर 5.3 फीसद तक ले जाने का लक्ष्य तय किया था। इसके लिए अनुबंध खेती, बीटी बीज जैसे प्रयोग भी शुरू किए गए, लेकिन जमीन पर कुछ दिखा नहीं, क्योंकि यह सब तभी संभव है जब खेती लायक जमीन को सड़क, शहर जैसे निर्माण कार्यों से बचाया जा सके।

उत्तर प्रदेश की सालाना राज्य आय का 31.8 फीसद खेती से आता है। हालांकि यह प्रतिशत सन 1971 में सत्तावन, सन 1981 में पचास और 1991 में इकतालीस था। इससे साफ है कि लोगों से खेती दूर हो रही है। खेती ज्यादा फायदे का पेशा नहीं रहा या फिर दीगर कारणों से लोगों का इससे मोहभंग हो रहा है। दिल्ली से सटे जिलों- गाजियाबाद, बागपत, गौतम बुद्ध नगर जिले से बीते तीन दशकों से खेत उजड़ने का जो सिलसिला शुरू हुआ, उससे भले ही कुछ लोगों के पास पैसा आ गया हो, लेकिन वह अपने साथ कई ऐसी बुराइयां और अपराध लाया कि गांवों की संस्कृति, संस्कार और सभ्यता सभी कुछ नष्ट होते चले गए। जिनके खेत थे, उन्हें तो कार, मकान और मौज-मस्ती के लिए पैसे मिल गए, लेकिन उनके खेतों में काम करने वाले बेरोजगार हो चले गए। उनके लिए करीबी महानगर दिल्ली में आ कर रिक्शा चलाने या छोटी-मोटी नौकरी करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा। जो गांव में आधा पेट रह कर भी खुश थे, वे आज दिल्ली में न तो खुद खुश हैं और न ही दूसरों की खुशी के लिए कुछ कर पा रहे हैं।

राज्य में बड़े या मझौले उद्योगों को स्थापित करने में कई समस्याएं हैं। बिजली व पानी की कमी, कानून-व्यवस्था की जर्जर स्थिति, राजनीतिक इच्छा-शक्ति का अभाव। ऐसे में खेती पर जीवकोपार्जन व रोजगार का जोर बढ़ जाता है। इस कटु सत्य से बेखबर सरकार पक्के निर्माण, सड़कों में अपना भविष्य तलाश रही है। यदि हाल ऐसा ही रहा तो आने वाले पांच सालों में राज्य की कोई तीन लाख हेक्टेयर जमीन से खेतों का नामोनिशान मिट जाएगा। किसान को भले ही देर से सही, यह समझ में आ रहा है कि शहर व आधुनिक सुख-सुविधाओं की बातें मृग-मरिचिका हैं और एक बार जमीन हाथ से जाने के बाद मिट्टी भी मुट्ठी में नहीं रह जाती है।

प्रदेश के चहुंमुखी विकास के लिए कारखाने, बिजली परियोजनाएं और सड़कें सभी कुछ जरूरी हैं। लेकिन यह भी तो देखा जाए कि अन्नपूर्णा धरती को उजाड़ कर इन्हें पाना कहां तक व्यावहारिक व फायदेमंद है। सनद रहे, राज्य की कोई ग्यारह फीसद भूमि या तो ऊसर है या फिर खेती में काम नहीं आती है। यह बात जरूर है कि ऐसे इलाकों में मूलभूत सुविधाएं जुटाने में जेब कुछ ज्यादा ढीली करनी होगी। काश ऐसे इलाकों में नई परियोजना, कारखानों आदि को लगाने के बारे में सोचा जाए। इससे एक तो नए इलाके विकसित होंगे, दूसरा खेत बचे रहेंगे, तीसरा विकास 'बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय' वाला होगा। वैसे सरकार विश्व बैंक से बंजर जमीन के सुधार के नाम पर 1332 करोड़ का कर्ज भी ले चुकी है। ऐसे में यह विडंबना ही है कि एक तरफ से तो अरबों का कर्ज लेकर सवा लाख हेक्टेयर जमीन को खेती के लायक बनाने के कागजी घोड़े दौड़ रही है, दूसरी ओर निर्माण गतिविधियों को बढ़ावा देकर अच्छे-खासे खेतों को ऊसर बनाया जा रहा है। किसानों के लिए नकली बीज व खाद की भी समस्या भी काफी गंभीर है। सिंचाई के लिए बिजली का टोटा है। कृषि मंडियां दलालों का अड्डा बनी हैं और गन्ना, आलू जैसी फसलों के वाजिब दाम मिलना या सही समय पर कीमत मिलना लगभग असंभव जैसा हो गया है। जाहिर है कि ऐसी घिसी-पिटी व्यवस्था में नई पीढ़ी खेती नहीं छोड़ेगी तो करेगी क्या।

शोर में शांति

रमाशंकर श्रीवास्तव

दुनिया मेरे आगे

भारत एक बड़ा देश है। विदेशी देख कर चकित हैं कि यहां इतने मुद्दों पर बहसें होती हैं तब भी कोई फर्क नहीं पड़ता। तरबूज की तरह यह साबूत बचा रहा। चाकू बहुत चले, पर तनिक न कटा। राजनीति, जाति, धर्म, पार्टी और सिद्धांतों पर बहसें होती रहीं, इतिहास और वर्तमान का मुलम्मा चढ़ता रहा, फिर भी न कोई खरोंच, न बदलाव। लोग लड़ते-भिड़ते रहे, मगर दिल का दरिया बड़ा रहा। नाराजगी में भी प्यार-मोहब्बत बनी रही। पानी नहीं बरसा, खेत में फसल नहीं उगी, अनाज महंगे हो गए, थाली खाली हुई। मगर देश को बहसें परोसी जाती रहीं। टीवी चैनल और मीडिया में गूंजता रहा- 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव...!' सुनिए और मगन रहिए। नतीजे की खोज करेंगे तो अपना माथा पीटना होगा।

सब्जी-बाजार में ग्राहक अपना-अपना थैला लिए घूम रहे हैं। घंटे भर का समय लग गया, फिर भी विश्वास नहीं होता कि लूटे गए कि लूटा। दाल अंधेरे में छिपी मुस्कुराती रही और बाहर बहस चलती रही। संतोषी देश ने सोचा कि आज बिना दाल की खा लो, कल दाल आ जाएगी। विदेशियों को हंसी आती है, देश दाल की बहस में लगा है। तभी किसी ने गाया 'काहे री नलिनी, तू कुम्हलानी, तेरे ही नाल सरोवर पानी।' कभी-कभी वाकयुद्ध का तापमान चढ़ते-चढ़ते लात-जूते तक पहुंच जाता है। जूते नहीं चलते, मगर बात की लात दिल में उतर जाती है। अपने-अपने क्षेत्र की हस्तियां अपना अनुभव लिए कुर्सियों पर बैठी हैं। जोर-जोर से तर्क-कुतर्क रखे जा रहे हैं। एंकर अपनी बात उठा कर खुद ही फंस जाता है। उठे हाथ मांग कर रहे हैं, पहले मैं, पहले मैं। अहं की फांस उन्हें शांत नहीं बैठने देती।

टीवी चैनल बहस का निष्कर्ष देश तक पहुंचाने की जल्दी में हैं। इधर बहस की तहस-नहस हो रही है। वह बहुरूपिया बन गई। आटा गूंदा हो और आग जल रही हो तो रोटी सेंकना कौन नहीं चाहेगा। मगर वह है कौन, जो जेब भर कर बोलने के लिए भेज देता है। बातों के संघर्ष में लोग पिस रहे हैं। सभी को मालूम है कि कोल्हू में केवल सरसों की घानी डाल देने से तेल नहीं निकल जाता। सूखी सरसों में तेल कहां से आएगा। तेल निर्गुण ब्रह्म है। गोपियों के आगे उद्धव की बहस की दुर्दशा होती जा रही है। रक्षा-सौदा हो, विदेशी व्यापार हो, सीमा समझौता या अपराधियों की धर-पकड़ हो, बिना बहस के कोई फैसला नहीं हो पाता। बहस सक्रियता से हर मामले को उठाती है। ठोंकी पीठ जब उछल-उछल कर बोलती है, तब लगता है कि अपना पक्ष मजबूत रखना कितना जरूरी है। मरी-दबी समस्या में बहस 'कोरामिन' का काम करती है।

आजादी के सत्तर साल होने को आए। मतदाताओं ने अनुभव खूब बटोरे। लोगों को मालूम है कि नाटक में सरल और सुरक्षित भूमिका ज्यादा प्रियकर होती है। इसलिए बात वही करो जिसमें बचने की गुंजाइश हो। आज का समय विडंबनाओं से भरा है। बहस वाली टेबल फुटबॉल का मैदान बनती जा रही है। वाकयुद्ध पूरे देश में गूंजता रहता है। कोई न कोई सवाल रोज उठ खड़े होते हैं। किसकी हिम्मत है जो इनको बैठा सके। इतिहास उठा कर देखिए, पानी से निकाली मछली की तरह तड़फड़ाते रहे सवाल और मछली हाथ से फिसल कर पानी में वापस। कुछ दिन पहले नगर और गांव पर बहस गरमाई थी। प्रस्ताव आया था नगर खाली कर गांव लौटो। बहस का मुद्दा फिर उठा। मगर देहांत रोजी-रोटी की खोज में शहरों में आ बसे। नगर में मिश्रित संस्कृति आ बैठी। किसकी हिम्मत है जो उन्हें हटाए। पर्व-त्योहार भाषा और रस्म-रिवाज ने घुसपैठिए का काम किया।

ग्रामीण विकास के लिए जारी पैसों का कुछ हिस्सा भी देहातों में पहुंचा तो सीधे सच्चे लोग खुश हुए। कुछ उबड़-खाबड़ सड़कें ठीक हुईं। मिट्टी का तेल चार आने सस्ता हुआ। सस्ता कितना होना चाहिए, इस पर भी बहस छिड़ी। धीरे-धीरे शब्दों की नोंच हमारे व्यवहार में घुल मिल गई। छल वेश बदल कर आने लगा। सड़कें फोर लेन बनीं जरूर, पर दिल की धमनियां चौड़ी नहीं हुईं। तभी किस्मत की मारी असहिष्णुता धीरे से बहस में आ मिली। दिल का सिंहासन नहीं भाया तो टेबुल पर आ बैठी। उसकी भी छीछालेदर हो गई। जिस विषय का छीछालेदर करवाना हो उसको बहस की टेबुल पर बैठा दिया जाए। गंभीर सहिष्णुता नाटक का जोकर बन गईं। जिसे देखिए वही सहनशीलता की परिभाषा और सीमा निर्धारित कर रहा है। दो वाहनों की टक्कर में गलती का फैसला करने सहिष्णुता आ खड़ी होती है। फैसले के लिए सड़क पर बहस। लोग कहते हैं कि बहस कभी बासी नहीं होती। चतुराई से अपनी दिशा बदलती रहती है। निष्ठा भौंचक देखती रह जाती है। आजकल वाकयुद्ध के लिए नए-नए चेहरे कुर्सियों पर आ बैठते हैं। विचार कीजिए तो लगता है कि राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय विषयों पर बहस जरूर होनी चाहिए। उनसे कई नई बातें उभर कर आती हैं। मगर बहस जब अहं की लड़ाई बन जाती है तब एंकरों पर भी सवाल उठने लगते हैं।

हकीकत के आंकड़े

जिन आंकड़ों का पूरे देश को इंतज़ार था, वो नई सरकार बनते ही सामने आ गए। ये आंकड़ें मन को निराश और कुंठित करने वाले हैं। केंद्रीय सांख्यिकी दफ्तर के आंकड़ों के अनुसार देश की आर्थिक वृद्धि दर 2018-19 की जनवरी-मार्च तिमाही के दौरान 5.8 प्रतिशत रही, जो पांच साल में न्यूनतम दर है। जबकि बेरोजगारी दर 6.1 फीसद रही जो पिछले पैंतालीस वर्षों में सबसे ज्यादा है। इसके अलावा कृषि क्षेत्र भी भयानक मार झेल रहा है। जहां 2017-18 में कृषि विकास दर पांच फीसद थी और वह आज 2.9 फीसद पर टिक गई है। अगर ये आंकड़ें चुनाव से पहले आ जाते तो शायद नतीजे कुछ और हो सकते थे। जो सरकार बेरोजगारी को पिछली सरकार का कारण बताती है उसके कार्यकाल में सबसे कम रोजगार सृजित हुए हैं। ऐसे में नई सरकार को दोगुनी मेहनत करने की जरूरत है। नौकरियों के लिए हर साल लाखों नौजवान तैयार हो रहे हैं। पहले वालों को नौकरी नहीं मिली तो आने वाले युवा की फितरत हम देख सकते हैं। सरकार को इन आंकड़ों पर गौर करना होगा और गंभीरता से लेना होगा। राष्ट्रीय सुरक्षा भी अहम मुद्दा है, लेकिन देश के विकास और बेरोजगारी जैसे मुद्दों को भी हल्के में नहीं लिया जा सकता।

● *आशीष, रामलाल आनंद कॉलेज, दिल्ली*

गर्मी का कहर

दिल्ली सहित पूरे पश्चिमोत्तर भारत में भीषण गर्मी को देखते हुए मौसम विभाग ने गर्मी के लिहाज से खतरे की चेतावनी जारी की है। रेड कलर यानी तापमान का सबसे भयानक रूप। इसलिए लोगों को कुछ खास एहतियात बरतने की जरूरत है। इसके साथ ही देश के कई हिस्सों का तापमान ने पिछले पांच साल का रिकॉर्ड तोड़ दिया है, जिनमें सबसे ज्यादा तापमान राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले का रहा, जहां पचहत्तर साल पुराना रिकॉर्ड टूट गया। इस तरह गर्मी के भयानक रूप को देखते हुए स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने तेज धूप में बाहर निकलने से बचने और एहतियात बरतने के तौर पर पानी व दूसरे तरल पदार्थों के ज्यादा सेवन की सलाह दी है।

● *संजू कुमार, हनुमानगढ़ (राजस्थान)*

सूखा और संकट

बुंदेलखंड का टीकमगढ़ इलाका सदी का सबसे भयानक सूखा झेल रहा है। गांव के गांव खाली हैं। करीब पचास फीसद आबादी यहां से पलायन कर चुकी है। हालांकि यहां जल संकट दशकों से रहा है और बरसात दगा देती रही है। लेकिन पानी की कमी के कारण इतने बड़े पैमाने पर पलायन की शुरुआत दो-तीन दशक पहले से ही हुई। जिले के सौ से अधिक गांवों में तो एक भी आदमी नहीं बचा है। गांव के गांव वीरान पड़े हैं। निर्बल बूढ़े मवेशी अपने हाल पर छोड़ दिए गए हैं। विडंबना तो यह है कि पानी के कारण पलायन की यह तस्वीर उस क्षेत्र की है जहां तालाबों की एक पुरानी परंपरा रही है। क्षेत्र की तीन चौथाई आबादी के जीविकोपार्जन का जरिया खेती-किसानी है। लेकिन अब अधिकतर खेत सूखे पड़े हैं। इतने तालाब होने के बावजूद यहां जल संकट रहता है। जब कहीं से पानी की मांग होती है तो सरकार वहां जमीन खोद कर ट्यूबवेल लगाती है। जबकि इस क्षेत्र में भूगर्भ उत्खनन को सही नहीं माना जाता। यह वह इलाका है जहां अट्ठारह हजार करोड़ की लागत से केन बेतवा नदी को जोड़ कर सूखा दूर करने का सपना दिखाया जा रहा है। जबकि टीकमगढ़ जिले में जामनी नदी को तालाबों से जोड़ कर सैकड़ों एकड़ की सिंचाई का प्रयोग सफल रहा है। वह भी बगैर किसी विस्थापन व पर्यावरणीय संकट के। नदी जोड़ने के कुल बजट का एक फीसद खर्च करके यहां के हर खेत को पानी व हर कंठ को जल का सपना सहजता से साकार हो सकता है, वह भी छह महीने से कम समय में।

● *अजीत कुमार गौतम, गोरखपुर*

भ्रष्ट आयोग और भविष्य

आज प्रयागराज के हजारों छात्र अपने सपनों के खातिर सड़कों पर उतरने को मजबूर हुए हैं। चंद पैसों की लालच में न जाने कितनी रातों की मेहनत और न जाने कितनी आंखों के सपने बिक रहे हैं। उत्तर प्रदेश में पिछले एक दशक से एक भी परीक्षा का आयोजन नियत समय पर और बिना दाग लगे नहीं हुआ है। अगर सिर्फ इस सरकार की बात करें तो अब तक तीन बार शिक्षकों की भर्ती का विज्ञापन निकाला गया, लेकिन तीनों ही भर्तियां दागदार रही हैं। इनमे सिर्फ 2016 वाली शिक्षक भर्ती ही पूरी हो पाई। उसमें भी कॉपी बदलने और नंबरों के हेरफेर की धांधली हुई। 2016 की एलटी ग्रेड शिक्षक की भर्ती आयोग के भ्रष्ट रूप का सबसे बड़ा उदाहरण बन कर सामने आई, जिसमें छात्रों की मेहनत और सपनों को दस और पच्चीस लाख में बेच दिया गया। प्रांतीय लोक सेवा आयोग की सबसे बड़ी परीक्षा की मुख्य परीक्षा का प्रश्नपत्र आयोग के सचिव और परीक्षा नियंत्रक के सहयोग से प्रश्नपत्र छापने वाले प्रिंटिंग प्रेस के मालिक द्वारा पच्चीस लाख में बेच दिया जाता है। ऐसे में अन्य छोटी भर्तियां जो पहले पूरी चुकी उनको कैसे मान लिया जाए कि उनमें पूरी ईमानदारी बरती गई है। कहने को तो सीबीआइ जांच पिछले तीन साल से चल रही है, लेकिन छात्रों का भविष्य तो चौपट होता जा रहा है, जिसकी कोई सुध नहीं ले रहा।

● *शिवम चतुर्वेदी, प्रयागराज*

जल नहीं तो कल नहीं

आज दुनिया जल संकट का सामना कर रही है। पिछले साल केरल बाढ़ की भयानक आपदा झेल चुका है, लेकिन आज पानी की एक-एक बूंद के लिए वह तरस रहा है। बुंदेलखंड में तो सैकड़ों गांव वीरान हो गए हैं। देश के लगभग सभी हिस्सों में बड़े जल संचयन स्थलों में पिछले साल की तुलना में बहुत कम पानी रह गया है। जहां पर कुछ लोग पानी की कमी के कारण पलायन करते हैं तो वहीं राजस्थान के रेगिस्तानी इलाके के लोग कम पानी में भी अपने प्रत्येक कार्य को सुनियोजित तरीके से करते हैं। गुजरात के कुछ जिले जैसे जूनागढ़, अमरेली और राजकोट के सौ गांव ने पानी की आत्मनिर्भरता का गुर खुद ही सीखा। बिछियावाड़ा गांव से डेढ़ लाख लोग व कुछ दिन की मेहनत के साथ बारह बांध बनाए और एक ही बारिश में तीन सौ एकड़ जमीन सींचने के लिए पर्याप्त पानी जुटा लिया। ऐसे हमारे जीवन में कई तरीके हैं जिसे अपनाकर पानी की बचत कर सकते हैं।

● *दुर्गेश शर्मा, गोरखपुर*

चौपाल

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com